चन्द्रशेखर आजाद

चन्द्रशेखर आज़ाद

प्राणनाथ वानप्रस्थी

शिक्षा भारती, कश्मीरी गेट, दिल्ली

ISBN : 978-81-7483-061-6
संस्करण : 2013
© : शिक्षा भारती
CHANDRASHEKHAR (Biography)
by Prannath Vanprasthi

शिक्षा भारती
मदरसा रोड, कश्मीरी गेट-दिल्ली-110006

क्रम

जन्म
बचपन
बेंतों का दण्ड
महन्त की गद्दी
सरकारी कोष की लूट
लाला लाजपत राय का बदला
कुछ घटनाएं
अन्तिम घड़ियां

चन्द्रशेखर आज़ाद

भारतवर्ष की पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए हमारे देश के सपूतों ने दो ढंग अपनाए। एक तो उन नवयुवकों का टोला था, जो यह विश्वास करते थे कि स्वाधीनता भिक्षा की तरह मांगने से नहीं मिला करती—शक्ति का सहारा लेकर ही शत्रुओं को मातृभूमि से बाहर खदेड़ना होगा। उनका कहना था, भला कभी कोई प्रसन्नता से भी राज्य छोड़ता है!

दूसरे दलवाले इस बात को नहीं मानते थे। वे दूसरे ढंग से विचारते थे। वे कहते थे कि आज हमारा देश सशस्त्र क्रांति के लिए तैयार नहीं है। इसमें सहस्रों लोगों का रक्त बह जाएगा और कुछ हाथ नहीं आएगा। इस समय केवल सत्याग्रह का हथियार ही चलाया जा सकता है और उसी के द्वारा सफलता मिलेगी। विदेशी वस्तुओं का और विदेशी शिक्षा का बायकाट होना चाहिए, अपने देश की बनी हुई वस्तुओं का ही प्रयोग होना चाहिए। देश के बच्चे-बच्चे के हृदय में भारत मां को स्वाधीन कराने की तड़प पैदा करनी चाहिए। इसी तरह एक दिन ऐसा आ सकता है कि अंग्रेज़ों को स्वयं भारतवर्ष से चला जाना पड़ेगा।

इस पुस्तक में जिस नवयुवक के साहस-भरे कार्यों की कहानी दी गई है, वह पहले ढंग के नवयुवक टोले का अमर सेनानी था। उसका नाम चन्द्रशेखर आज़ाद था। इस वीर ने माता-पिता के प्यार को, जवानी की मस्ती-भरी घड़ियों को और जीवन के सुनहले स्वप्नों को ठुकराकर, सिर पर कफन बांध भारत मां की बेड़ियों को तोड़ने के लिए अपने-आपको न्योछावर कर दिया।

इस वीर सरीखे अनगिनत नवयुवकों ने हथेली पर सिर रखकर सशस्त्र क्रांति में भाग लिया। कई हंसते-हंसते फांसी के तख्तों पर झूल गए और कई काले पानी की जेलों में सड़ते

रहे।

सन् 1857 के स्वतन्त्रता-संग्राम को भला कौन नहीं जानता! महारानी लक्ष्मीबाई, वीर तात्या टोपे, नाना साहब पेशवा, मुहम्मद बख्तखां, कुंबरसिंह, अहमदशाह, बाबा साहब सरीखे अनेकों वीरों ने हंसते-हंसते स्वतन्त्रता की वेदी पर अपने-आपको बलिदान कर दिया। पंजाब से लेकर दक्षिण भारत तक देश के कोने-कोने में यह युद्ध लड़ा गया। एक झंडे तले एकत्र होकर हमारे देश के सपूतों ने समुद्र-पार से आए हुए गोरे फिरंगियों को छठी का दूध याद करा दिया।

जन्म

सन् 1905 की बात है। अलीराजपुर स्टेट में एक ब्राह्मण परिवार रहता था। उस घर में एक-एक करके कई बालक जन्म ले चुके थे; परन्तु सभी काल के कराल मुख में चले गए। इसी दुःख के कारण माता-पिता सदा उदास रहते थे। इस वर्ष भी जो बालक जनमा, वह भी दुबला-पतला-सा ही था।

बालक का जन्म जहां उनके लिए खुशियों का संदेश लाया, वहां उसका दुर्बल शरीर देखकर माता-पिता का हृदय कांप गया।

बचपन

माता जगरानीदेवी और पिता सीताराम तिवारी बड़े यत्न से बालक का लालन-पालन करने लगे। बालक का मुख इतना सुन्दर था कि जो भी देखता उसे गोद में लेता और प्यार करता।

गांव की स्त्रियां माता जगरानीदेवी से कहतीं कि तुम्हारे लाड़ले को कहीं नजर न लग जाए, इसे संभाल-कर रखना। तभी से माता ने बालक के माथे पर काजल का तिलक लगा दिया। पर इससे तो बालक का मुख और भी चमक गया।

सचमुच संसार में निर्धन का जीना भी क्या जीना है! पेट की भूख मिटाने को अन्न नहीं; तन ढकने को कपड़ा नहीं। पग-पग पर उसे संसार की ठोकरें खानी पड़ती हैं। ऐसी कठिनाइयों के बीच में सतत रहते हुए भी पंडित सीताराम तिवारी ने सदा सिर ऊंचा करके जीवन बिताया और गांव में प्रतिष्ठा प्राप्त की। उन्होंने कभी किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया, भले ही भूखे रह जाते थे। कहते हैं, इनके घर में धन की इतनी कमी थी कि बालक को दूध तक भी नहीं मिलता था। फिर भी माता बड़े यत्न से अपने लाड़ले को प्रसन्न रखतीं। उसे कभी उदास न होने देतीं।

इस रियासत में उन दिनों यह प्रथा थी कि बच्चों को वीर बनाने के लिए बाघ का मांस खिलाया जाता था। बालक चन्द्रशेखर को भी बाघ का मांस खिलाया गया। और किसी बालक में वीरता के अंकुर जमे हों या नहीं, परन्तु वीर चन्द्रशेखर ने तो इस विश्वास को पूरा कर दिखाया।

एक बार दिवाली का त्योहार आया। चारों ओर जगमगाहट हो रही थी। एक स्थान पर बच्चे रंगीन तीलियां जला-जलाकर खेल रहे थे। एक तीली जलाई जाती, जो शीघ्र ही बुझ जाती। फिर दूसरी जलाई जाती। इस बीच तीली के बुझने पर छोटे-छोटे बालक उदास हो जाते। यह देख चन्द्रशेखर ने आगे बढ़कर आठ-दस तीलियां इकट्ठी जलाईं, जिनका बहुत अधिक प्रकाश हुआ और यह प्रकाश बहुत देर तक रहा। यह खेल देख बालक प्रसन्नता से तालियां पीटने लगे। इतने में चन्द्रशेखर के पास खड़े बालक ने देखा कि चन्द्रशेखर की हथेली जल गई है। यह देखते ही उसका हृदय कांप गया और उसने शोर मचा दिया।

अब सब बालक घबरा गए। उनमें से एक-दो बालक किसी वैद्य को बुलाने भागे, दूसरे अपने घरों को भागे ताकि किसी वृद्ध को बुलाया जाए और उसका हाथ ठीक किया जाए। चन्द्रशेखर ने सबको पास बुलाया और हंसकर कहा, “चिन्ता की कोई बात नहीं, यह सब अपने-आप ठीक हो जाएगा।” बहुत समय बाद तक भी चन्द्रशेखर के हाथ पर वह निशान बना रहा।

अब चन्द्रशेखर के मन में यह धुन समाई कि वह पढ़-लिखकर विद्वान् बन जाए। उसने माता-पिता से कहा कि मुझे काशी जाने की आज्ञा दीजिए ताकि मैं पंडित बन सकूं। माता अपने लाड़ले को आंखों से ओझल नहीं करना चाहती थीं। इसलिए उसे आज्ञा न मिली।

जो बात एक बार इस बालक के हृदय में समा जाती, वह उसे पूरा किए बिना चैन न लेता। जब उसने देखा कि माता-पिता किसी तरह भी नहीं मानते हैं, वह एक दिन घर से भाग खड़ा हुआ। फिर वह लौटकर घर कभी नहीं गया। कई दिनों बाद वह काशी पहुंचा और घरवालों को पत्र लिख दिया कि आप चिन्ता न करें, मैं यहां पढ़ने आया हूं।

धनी पुरुषों और राजाओं ने ऐसा प्रबन्ध किया हुआ था कि काशी में जो भी विद्यार्थी आएं, धर्मशाला में रहें। धर्मशाला में सब प्रकार का प्रबन्ध था।

काशी जाते ही चन्द्रशेखर का पूरा-पूरा खाने-पीने का, कपड़े-लत्ते का और दूसरी वस्तुओं का प्रबन्ध हो गया। वह दूसरे विद्यार्थियों के साथ-साथ अष्टाध्यायी, निघण्टु और दूसरे ग्रन्थ पढ़ने लगा।

बेंतों का दण्ड

सन् 1921 में हमारे देश के नेताओं ने विदेशी वस्तुओं, विदेशी शिक्षा और विदेशी राज्य का बायकाट शुरू कर दिया। स्थान-स्थान पर, नगर-नगर में विदेशी कपड़ों की होली जलाई गई। नगर-नगर में हड़तालें होने लगीं। जलूसों और जलसों द्वारा लोगों में स्वराज्य का बीज बोया जाने लगा। नेशनल स्कूल और कालेज खोले गए। विद्यार्थियों को भारतीय रंग में रंगा जाने लगा।

चन्द्रशेखर से न रहा गया। जहां-जहां स्वयंसेवक सत्याग्रह करने जाते, वह भी उनके पीछे-पीछे चल देता। एक बार उसने देखा कि एक पुलिस-अधिकारी हमारे सत्याग्रही भाइयों से बड़ा बुरा बर्ताव कर रहा है। यह दृश्य उस वीर से न देखा गया। उसने एक कंकर उठाया और पुलिस-अधिकारी के माथे को निशाना बनाया। कंकर लगते ही उसके माथे से रक्त की धारा बह निकली।

एक सिपाही ने कंकर फेंकनेवाले को देख लिया। उस सिपाही की आंखों में धूल झोंक चन्द्रशेखर साफ-साफ निकल गया और पकड़ा न जा सका।

चन्द्रशेखर के माथे पर लगे चन्दन के तिलक को पुलिसवाला न भूला। उसने पुलिस दल लेकर एक-एक करके नगर की सब धर्मशालाओं को खोजा। ढूंढ़ते-ढूंढ़ते वह चन्द्रशेखर के कमरे के सामने जा खड़ा हुआ। पुलिस-अधिकारी ने भीतर घुसकर देखा कि उसके कमरे में लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी और दूसरे नेताओं के चित्र टंगे हैं। पुलिसवालों ने आगे बढ़कर उसके हाथों में हथकड़ी डाल दी और बांधकर ले चले। चन्द्रशेखर ज़रा-सा भी नहीं घबराया और अकड़कर चला।

सर्दियों के दिन थे। पुलिसवालों ने उसे हवालात में बन्द कर दिया और ओढ़ने को कुछ नहीं दिया। उनका विचार था कि नवयुवक घबराकर क्षमा मांग लेगा। आधी रात को पुलिस इंस्पेक्टर की नींद खुली, उसने सोचा—चलो देखें, युवक चन्द्रशेखर का क्या हाल है; वह सर्दी के मारे अकड़ रहा होगा। ज्योंही उसने हवालात के अन्दर पांव रखा तो उसने देखा कि युवक दंड पेल रहा है और उसके शरीर से पसीना बह रहा है।

यह देखकर उसकी आंख खुली की खुली रह गईं। अब वह करे तो क्या करे! वह उल्टे पांव घर लौट गया, और अगले दिन चन्द्रशेखर को अदालत में ले जाया गया। एक पारसी मजिस्ट्रेट खरेघाट उन दिनों अपनी कठोरता के लिए बड़ा प्रसिद्ध हो रहा था। चन्द्रशेखर को उसी के सामने लाया गया।

मजिस्ट्रेट ने देखा कि उठती हुई आयु का सुन्दर गठे हुए शरीर का युवक उसके सामने लाया गया है। उसने पूछा, “तुम्हारा नाम क्या है?”

युवक बोला, “आज़ाद।”

“पिता का नाम क्या है?”

युवक अकड़कर बोला, “स्वतन्त्र।”

तीसरी बार जज ने पूछा, “तुम्हारा घर कहां है?”

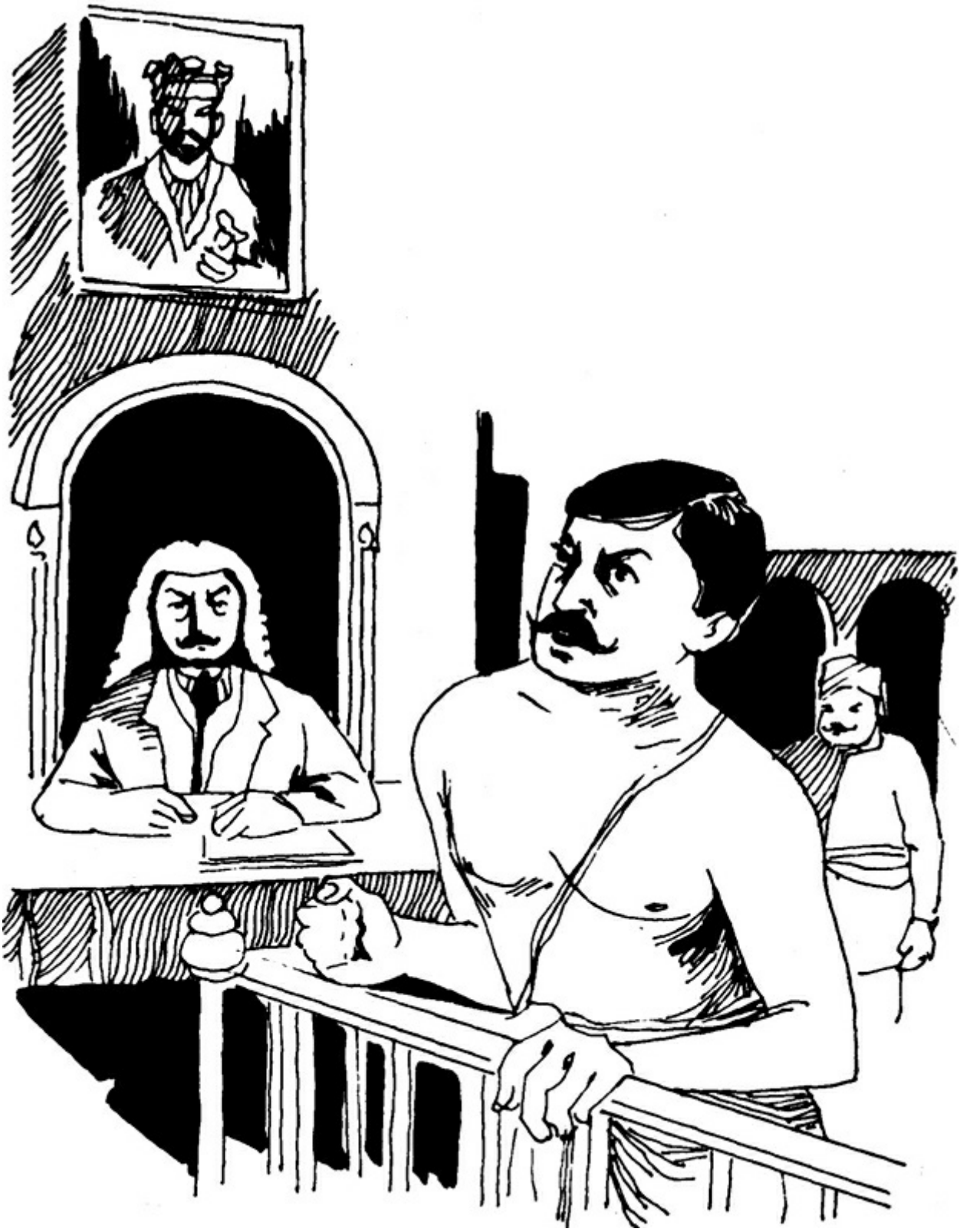

युवक ने निर्भय होकर बोला, “जेलखाना।”

अब तो मजिस्ट्रेट के काटो तो खून नहीं। उसने युवक को पन्द्रह बेंत का कठोर दंड दिया।

यह एक बड़ी भयानक सज़ा होती है। इससे शरीर की चमड़ी उधड़ जाती है। बनारस जेल के जेलर सरदार गंडासिंह का उन दिनों वहां बोलबाला था। बड़े-बड़े कैदी उसका नाम सुनते ही कांप जाते थे। युवक चन्द्रशेखर को उसके सामने ले जाया गया। उसने अपने सामने युवक को टिकटिकी पर बंधवाया। अब भी चन्द्रशेखर मुस्करा रहा था। जेलर ने मन में सोचा कि अभी इसकी बुद्धि ठिकाने आ जाएगी।

टिकटिकी पर बांधने से पहले हर एक को बिल्कुल नंगा कर दिया जाता था। केवल लंगोट रहने देते थे। फिर उसके शरीर पर एक औषधि लगाई जाती थी ताकि ज़्यादा चोट न आए।

जेलर की आज्ञा होते ही युवक के शरीर पर बेंतों की चोट पड़ने लगी। पहली चोट पर नवयुवक गरजकर बोला, “भारत माता की जय!” पहले बेंत के लगते ही उसके चूतड़ों की चमड़ी उतर गई, पर वह शान्त बना रहा।

फिर जेलर ने कड़ककर कहा, “दो।” इस पर भंगी ने पूरे बल से हंटर को चलाकर चन्द्रशेखर पर दे मारा। इस बार तो रक्त बह निकला। पर वीर नवयुवक चन्द्रशेखर ने उसी तरह निर्भय होकर कहा, “भारत माता की जय!”

जेलर युवक का साहस देखकर चकित रह गया। उसने फिर तीसरी बार कहा, “तीन।” इस बार भंगी ने ज्यों ही हंटर चलाया, चन्द्रशेखर के चूतड़ों पर स्थान-स्थान पर घाव हो गए। फिर भी वीर चन्द्रशेखर आज़ाद ने शान्त स्वर में कहा, “भारत माता की जय!”

इस तरह एक-एक करके पन्द्रह बेंत चन्द्रशेखर को लगाए गए। हर बेंत के लगते ही उसके शरीर की चमड़ी और उधड़ जाती। परंतु वह भारत माता का सच्चा सपूत हर चोट के साथ ‘भारत माता की जय’ के नारों से जेल की चारदीवारी को गुंजाता रहा।

यह समाचार नगर-निवासियों को मिला। सहस्रों की संख्या में स्त्री-पुरुष अपने देश के होनहार सपूत को देखने के लिए जेल के फाटक पर एकत्र हो गए। भारत मां के लाड़ले पुत्र चन्द्रशेखर ने ज्योंही जेल के फाटक के बाहर पांव रखा, एक साथ सहस्रों आवाज़ों ने ‘चन्द्रशेखर आज़ाद की जय’, ‘भारत माता की जय’ ‘इन्कलाब जिन्दाबाद’ के नारों से उस वीर का स्वागत किया।

उस दिन ज्ञानवापी मुहल्ले में एक बहुत बड़ा समारोह हुआ। ऐसा मालूम होता था कि सारा नगर ही वीर के दर्शनों के लिए उमड़ पड़ा है। उसे स्टेज पर खड़ा कर दिया गया। नगरवासियों ने उस निर्भय युवक को फूलों से लाद दिया। इतनी पुष्पवर्षा हुई कि सारा मंच रंग-बिरंगे फूलों से भर गया।

उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री सम्पूर्णानन्द जी उस समय ‘मर्यादा’ नामक पत्रिका निकालते थे। उन्होंने अपने पत्र में उस नवयुवक का चित्र निकाला और ब्रिटिश शासन के अत्याचारों का भण्डा फोड़ा।

कुछ समय देश-सेवा में बिताने के बाद एक बार फिर वीर चन्द्रशेखर पढ़ने लगा। वह काशी विद्यापीठ, भदैनी में पढ़ाई करने लगा। यह सन् 1923 की बात है। देश-सेवा के कार्य में लगे रहने के कारण वह पढ़ाई में तो बहुत पिछड़ गया था, इसलिए उसे निचली कक्षा में रखा गया। वीर चन्द्रशेखर ने तो किसी महान् कार्य के लिए जन्म लिया था। अपने से छोटे विद्यार्थियों में रहकर उसका मन पढ़ाई से ऊब गया। उसके साथ पढ़नेवाले दूसरे विद्यार्थी उसका बड़ा आदर करते थे। परन्तु फिर भी उसका मन नहीं लगता था। एक दिन चुपचाप वह अपना बोरिया-बिस्तरा उठाकर कहीं चला गया।

महन्त की गद्दी

चौरीचौरा-कांड के बाद देश के नेताओं ने बायकाट आन्दोलन बन्द कर दिया। अब उन्होंने कौंसिल में जाकर देश को उन्नत करने की सोची।

बंगाल उस समय क्रांतिकारी युवकों का केन्द्र था। कुछ नवयुवक उत्तर प्रदेश में आए और कार्य में लग गए। चूंकि बनारस में बंगालियों की संख्या बहुत अधिक थी, इसलिए यहीं से संगठन शुरू किया गया। इनका सारा कार्य गुप्त होता था, इसीलिए इनके पास धन आए तो कैसे और कहां से? ये वीर नवयुवक सदा भूखे-प्यासे रहकर, सिर को हथेली पर रखकर, अंग्रेज़ी राज्य की जड़ों को उखाड़ने में जुटे रहते थे।

इन्हीं दिनों प्रणवेश नामक क्रांतिकारी युवक से चन्द्रशेखर आज़ाद की भेंट हो गई। 'आज़ाद' तो ऐसे अवसर की खोज में था ही। प्रणवेश ने झट इस होनहार युवक को अपने दल में भरती कर लिया। यहीं पर रामप्रसाद 'बिस्मिल' सरीखे क्रांतिकारी वीरों से भी 'आज़ाद' का परिचय हुआ।

सोचा गया कि किस तरह दल का व्यय चले। इस पर चन्द्रशेखर और कुछ दूसरे युवक ब्राह्मण विद्यार्थियों जैसे भेस बनाकर क्षेत्रों में जाकर भोजन कर आते और दिन-भर योग्य नवयुवकों को खोजते और अपने में मिलाते रहते।

क्षेत्रों में जाकर भोजन करना 'आज़ाद' को बिल्कुल पसंद न था। कुछ समय बाद इस समय दल ने निश्चय किया कि डाके डालकर धन प्राप्त किया जाए। अब क्या था, इन युवकों ने धनी-मानी लोगों के घर लूटने शुरू किए। एक बार कई युवक मिलकर डाका डालने चले। इनके नेता बने रामप्रसाद 'बिस्मल'। फतहपुर के समीप ही ये लोग एक गांव में पहुंचे। गांव के बाहर ही गांववालों ने पूछा, "आप कहां जा रहे हैं?" उन्होंने उत्तर दिया कि हम ग्राम के मुखिया के घर जा रहे हैं। वहां हमारा निमंत्रण है।

शीघ्र ही यह दल मुखिया के घर पहुंचा और लगा लूट-पाट मचाने। शोर सुनकर गांव के बहुत-से लोग इकट्ठे हुए। इन्होंने अपनी पिस्तौलें निकाल लीं। कुछ तो धन लूटने में लगे और दूसरे मुकाबला करने लगे। इनके नेता की आज्ञा थी कि किसी भी देवी को कुछ नहीं कहना, चाहे वह हमें कितना भी परेशान करे।

जब देवियों ने देखा कि ये डाकू हमें कुछ नहीं कहते, तो उन्होंने आगे बढ़कर इनके कार्य में बाधा डालनी शुरू कर दी। दो देवियों ने झपटकर इनकी एक पिस्तौल भी छीन ली। रामप्रसाद 'बिस्मिल' का कहना था कि यदि हमने देवियों का मान करना न सीखा, तो हम जीवन में कभी भी सफल नहीं हो सकते। इसलिए किसी भी युवक का साहस न हुआ कि उनके हाथों से पिस्तौल वापस ले ले।

उधर गांव के बाहर भी गांववालों की संख्या बढ़ती जा रही थी। कहीं लेने के देने न पड़ जाएं, यह सोचकर 'बिस्मल' ने सबको संकेत किया कि जैसे भी बन सके, अब यहां से भागने की कोशिश करो।

अपना-सा मुंह लेकर किसी न किसी तरह दल के सभी सदस्य अपने ठिकाने पर लौट आए और एक पिस्तौल भी छोड़ आए। 'सिर मुंडवाते ओले पड़े' वाली बात हुई। शुरू में ही सफलता न मिली।

अब दल की बैठक हुई। निश्चय हुआ कि यह ढंग भी ठीक नहीं है। दल में रामकृष्ण खत्री नामक एक साधु भी था। उसने बताया कि गाजीपुर के महन्त की गद्दी बहुत बड़ी है। अपार धन-सम्पत्ति है। वह महन्त इन दिनों रोगी है, मरनेवाला है। वह योग्य शिष्य की खोज में है। यदि हम में से कोई साथी उसका शिष्य बन जाए, तो दल को भरपूर धन मिल सकेगा।

सबकी राय में चन्द्रशेखर आज़ाद ही एक ऐसा युवक था जिसे महन्त पसन्द कर लेगा। इच्छा न होते हुए भी सब के कहने-सुनने पर दल के कार्य को चलाने के लिए 'आज़ाद' मान गया। उसे समझा-बुझाकर, पढ़ा-लिखाकर महन्त के सामने ले जाया गया। महन्त उसकी

सुन्दरता, गठीला शरीर और मधुर वाणी सुन मोहित हो गया और उसे अपने पास रख लिया। ये साधु निर्मल कहलाते थे और इनका धार्मिक ग्रंथ 'गुरु ग्रंथ साहिब' है जो गुरुमुखी भाषा में है। अब तो चन्द्रशेखर आज़ाद को दिन-रात गुरुमुखी रटनी पड़ी।

कहां एक क्रांतिकारी का जीवन और कहां एक महन्त का शिष्य! चन्दशेखर शीघ्र ही इस जीवन से ऊब गया। अभी दो मास भी नहीं हो पाए थे कि उसने चोरी से अपने साथियों को पत्र लिखा, "यह दिन-भर में कई-कई सेर दूध पी जाता है। खूब दंड पेलता है। यह दिन-प्रतिदिन स्वस्थ होता जा रहा है। यह मरनेवाला नहीं है। मुझे कृपा करके यहां से निकालिए।"

पत्र पाते ही साधु गोविन्दप्रकाश और मन्मथनाथ गाज़ीपुर पहुंचे। गोविन्दप्रकाशजी गुरु बने और मन्मथनाथ बने शिष्य। दोनों ने जाते ही महन्त के चरण छुए। कुशल पूछने के बाद वे दोनों मठ देखने के लिए निकले। उन्होंने देखा कि मठ गढ़ की तरह है। चारों ओर ऊंची-ऊंची दृढ़ दीवारें हैं। यदि यह स्थान हमारे दल को मिल जाए, तो क्या ही अच्छा हो! गुप्त बैठकों के लिए इससे अच्छा स्थान और कौन-सा हो सकता है। धन की भी मठ में कोई कमी नहीं।

यह सोचते-विचारते वे दोनों क्रांतिकारी वीर 'आज़ाद' को ढूंढ़ते हुए घूम रहे थे कि 'आज़ाद' ने उन्हें देख लिया। बड़ी देर तक वे लोग आपस में बातें करते रहे। अन्त में मन्मथनाथ ने चन्द्रशेखर को समझाकर कहा, "भाई! तुम्हें यहीं रहना चाहिए। इससे हमारे दल का बहुत बड़ा काम हो सकता है।"

आज़ाद पक्षी कैसे पिंजरे में रहना पसन्द कर सकता है! 'आज़ाद' ने साफ-साफ कह दिया कि मुझसे तो अब यहां नहीं रहा जाता। परन्तु साधु गोविन्दप्रकाश और मन्मथनाथ ने उसे समझा बुझाकर रोक दिया और अपने स्थान को लौट आए।

और कोई मार्ग न देखकर 'आज़ाद' एक दिन बिना किसी को बताए मठ से चल दिए और बनारस जाकर अपने साथियों में जा मिले। इस तरह आज़ाद के लौट आने से क्रान्तिकारी दल की धन पाने की वह आशा टूट गई।

सरकारी कोष की लूट

सन् 1924 की बात है। चन्दशेखर आज़ाद के यत्न से कई बड़े काम के आदमी दल में भरती हुए जिन्होंने बाद में बड़े-बड़े कारनामे किए।

'आज़ाद' संगठन के कार्य में बड़े चतुर थे। एक अधेड़ आयु के मिस्त्री को दल में मिलाया गया। वह मिस्त्री तमंचे बनाना जानता था। उससे दल के युवकों को बड़ी आसानी से शस्त्र मिल जाते थे। वह इतना योग्य मिस्त्री था कि उसने एक बार पिस्तौल तक बना डाली थी।

इन दिनों दल के सदस्यों ने खर्च चलाने के लिए एक और ढंग अपनाया हुआ था। सभी लोग कुछ न कुछ मेहनत-मजदूरी करके अपना निर्वाह करते थे। 'आज़ाद' भी एक मुरब्बे के व्यापारी के पास बहीखाते का कार्य करने लगे।

यह सब कुछ होने पर भी दल का कार्य बड़ी कठिनाई से चलता था। बंदूकें और दूसरे शस्त्र खरीदते, फिर उन्हें छिपा-छिपाकर रेल में एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते। कभी-कभी उन्हें पहले और दूसरे दर्जे में भी यात्रा करनी पड़ती थी। फिर तन ढकने से लेकर खाना-पीना और मकान किराया आदि के सभी व्यय पूरे करने होते थे। श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' ने अपनी पुस्तक 'काकोरी के शहीद' में इन विपत्तियों के बड़े दर्दभरे शब्दों में वर्णन किया है। वे लिखते हैं कि सर्दियों में एक-एक कम्बल में कई नवयुवकों को एक साथ सोना पड़ता था। कई बार तो यहां तक हुआ कि एक लंगोट के सिवाय वीरों के तन पर कोई वस्त्र ही नहीं होता था। एक ओर तो पहनने की यह दशा थी और दूसरी ओर कई-कई बार उन्हें भूखे रह जाना पड़ता था। चाय भी मिलती तो वह भी बिना चीनी के।

पहले तो उन्होंने लकशा मुहल्ले में एक मकान किराये पर लिया, जिसके बाहरी कमरे में तबला, हारमोनियम और सारंगी आदि पड़े रहते थे, जिससे बाहरी लोग यह समझें कि वे आवारा नवयुवक हैं।

उन्होंने एक और मकान भी किराये पर लिया हुआ था, जिसके ऊपर एक बोर्ड लगा हुआ था। जिस पर बंगला भाषा में मोटे-मोटे अक्षरों में 'कल्याण आश्रम' लिखा हुआ था। दिन-रात प्रयत्न करते-करते इस टोली में कई होनहार युवक आ मिले।

एक बार सभी क्रांतिकारी वीर कहीं जा रहे थे। नेता ने सोचा कि कारतूस गिने जाएं। गिनती करने पर एक कारतूस कम निकला। नेता को 'आज़ाद' पर शक था, क्योंकि वह जानता था कि इन्हें गोलियां चलाने का बड़ा शौक है। उसने अपने साथी से पूछा कि इसका पता कैसे लगाया जाए। और कोई चारा न देख नेता ने सबसे पहले अपनी तलाशी दी। फिर दूसरे ने, फिर तीसरे ने और फिर बारी आने पर 'आज़ाद' ने बड़ी प्रसन्नता से अपनी तलाशी दी, परन्तु कारतूस न मिला। 'आज़ाद' बड़ों की आशा को पूरा-पूरा मानते थे।

इन्हीं दिनों परचे छपवाकर लोगों में बांटे गए और उन्हें बताया गया कि किस तरह हम लोग देश की गुलामी की जंज़ीरों को तोड़ रहे हैं। एक बार एक परचा छापा गया। तय हुआ कि इस परचे को एक ही समय सभी बड़े-बड़े नगरों में बांटा जाए और वह भी गुप्त ढंग से। किसी को कानों-कान भी पता नहीं लगना चाहिए।

भारतवर्ष के एक कोने से दूसरे कोने तक यह परचा बांटा गया। बनारस में चन्द्रशेखर आज़ाद ने इस कार्य को इतनी सुन्दरता से निभाया कि देखनेवाले सभी चकित रह गए। जिस स्कूल में जाओ, जिस सिनेमाघर में जाओ, जिस मन्दिर में जाओ, जिस घर में जाओ, लोगों के हाथ में वह परचा है। उस बुद्धिमान् युवक ने सब स्थानों के चपरासियों को और सेवकों को अपनी ओर मिला लिया था। मातृभूमि की स्वतंत्रता के नाम पर सभी ने प्रसन्नता से साथ दिया।

जब मनुष्य विपत्तियों से घबरा जाता है तो वह भूल भी कर बैठता है। दल का व्यय न चलता देख इस देशभक्त टोली ने सरकारी कोष लूटने की बात सोची। कई साथियों ने विरोध किया कि सरकार से खुली टक्कर हो जाएगी और इससे हमारे लिए जीना दूभर हो जाएगा। परन्तु दल के नेता रामप्रसाद 'बिस्मिल' जिस बात पर अड़ जाते थे वह बात सबको माननी

पड़ती थी।

रेलवे की आय 8 डाउन डाकगाड़ी पर ले जाई जाती थी। हर स्टेशन की आय एकत्र करके लखनऊ पहुंचाई जाती थी। 9 अगस्त, सन् 1925 के दिन दल के दस क्रांतिकारी वीर इस धन को लूटने के लिए इकट्ठे हुए। इनके नाम ये हैं—रामप्रसाद 'बिस्मिल', चन्द्रशेखर 'आज़ाद', अशफाकउल्लाखां, मन्मथनाथ गुप्त, बनवारीलाल, शचीन्द्रनाथ बख्शी, मुरारीलाल, केशव चक्रवर्ती, राजेन्दनाथ लाहिड़ी और मुकंदीलाल।

ये लोग पिस्तौलें जेबों में डाल लखनऊ से चलकर बालामाऊ जंकशन पर जा उतरे। फिर वहां से 8 डाउन कलकत्ता मेल पर जा सवार हुए। इनमें से श्री अशफाक, शचीन्द्रनाथ बख्शी और राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी तो दूसरी श्रेणी के डिब्बे में चढ़े और दूसरे सभी साथी तीसरी श्रेणी के डिब्बे में जा बैठे।

ज्यों ही गाड़ी निश्चित स्थान पर पहुंची, रेल की खतरे की जंजीर खींचकर गाड़ी रोक ली गई। इंजन के ड्राइवर को खुली भूमि पर लिटा दिया गया और दो साथी पिस्तौलें लेकर उसके पास खड़े हो गए। उस बीच कई खाली फायर छोड़े गए। गाड़ी के अगले सिरे और अंतिम सिरे पर पिस्तौलें लेकर दो-दो युवक खड़े हो गए। रेलगाड़ी के यात्रियों को बता दिया गया कि हमें तो सरकारी कोष लूटना है। आप लोग चुपचाप अपने-अपने स्थानों पर बैठे रहें। जो भी यात्री इस समय गाड़ी से उतरने का यत्न करेगा, वह गोली का निशाना बना दिया जाएगा।

अब रेलवे के खज़ानेवाले भारी बक्से को गाड़ी से नीचे उतारा गया। हथौड़ी से उसके ताले को तोड़कर सब नोट और नकदी निकाल ली गई। इस तरह अपने कार्य को पूरा करके सभी क्रांतिकारी वीर लखनऊ पहुंच गए।

इस डकैती के होने पर सरकार ने पूरे बल से क्रांतिकारी युवकों की खोज शुरू की। गुप्तचर विभाग दिन-रात कार्य में लग गया। 25 अगस्त को दिन निकलने से पहले-पहले उत्तर प्रदेश के सभी नगरों में पुलिस ने छापे मारे। अनेक युवकों को बंदीगृह में डाल दिया गया। गिरफ्तारियों का जाल बिछा दिया गया। चन्द्रशेखर के घर पर भी पुलिस जा पहुंची परन्तु वे उस समय वहां पर नहीं थे। यह पहला दिन था जबकि पुलिस ने 'आज़ाद' को खुले रूप से पकड़ना चाहा। केवल 'आज़ाद' और उनके दो साथी ही पुलिस के पंजों में नहीं आए। दूसरे सभी क्रांतिकारी वीर जेल के सींखचों में बन्द कर दिए गए।

जिन-जिन नवयुवकों को पुलिस ने बन्दी बनाया, उनमें से कुछ ने अपनी जान बचाने के लिए दल के कई गुप्त स्थानों का पता दे दिया। इस पर पुलिस ने सारे देश में क्रांतिकारियों के बहुत सारे अड्डों पर छापा मारा और अनगिनत वीर जेलों में ठूंस दिए गए।

इधर 'आज़ाद' चाहते थे कि अपने प्रमुख-प्रमुख साथियों को तो छुड़ा ही लिया जाए। परन्तु रामप्रसाद 'बिस्मिल' के जेल जाने के बाद जो युवक दल का नेता चुना गया, वह इतना कायर निकला कि आज का काम कल पर और कल का परसों पर डालते डालते उसने कई महीने बिता दिए और कुछ न किया। पुलिस ने घोषणा कर दी कि जो कोई चन्द्रशेखर 'आज़ाद' का पता बताएगा, उसे भरपूर इनाम दिया जाएगा। इसके बाद आज़ाद झांसी आ गए और दिन-भर जंगल में रहकर निशानेबाज़ी का अभ्यास करने लगे। इन्हीं दिनों आपने

ड्राइवरी सीख ली।

तब पुलिस की सारी शक्ति चन्द्रशेखर आज़ाद को खोजने में लग गई। इधर क्रांतिकारियों का संगठन ढीला पड़ रहा था। कुछ कार्य होता न देख और पुलिस की दृष्टि से बचने के लिए श्री आज़ाद नगर में चले गए, जहां जहाज़ में बोझा ढोने का कार्य करने लगे। जब भूख लगती, तो दूध का डिब्बा ले लेते और दूध पीकर ही रह जाते। इन दिनों आपको नौ आने प्रतिदिन के हिसाब से मज़दूरी मिलती थी। रात्रि के बारह बजे तक सिनेमा में समय बिताते और फिर जहाज़ के गोदाम के बाहर टांगें फैलाकर सोते रहते। इस तरह इस क्रांतिकारी वीर ने अपने जीवन के डेढ़-दो वर्ष यहीं बिता दिए।

उधर उत्तर प्रदेश में सरकार ने क्रांतिकारी वीरों पर बड़े-बड़े मुकदमे चलाए। डेढ़ वर्ष तक लगातार ये मुकदमे चलते रहे। अन्त में सरकार ने चार वीरों को फांसी का दंड दिया, कइयों को काले पानी की सज़ा हुई; और कुछ को क्षमा मांगने पर रिहा कर दिया गया। सन् 1927 के दिसम्बर मास में अपने चार साथियों के फांसी पर झूलने का समाचार पढ़कर 'आज़ाद' का हृदय थर्रा उठा। वह निर्भय वीर एक बार फिर अपनी जान को हथेली पर रखकर उत्तर प्रदेश में आ पहुंचा।

इस बीच कानपुर में 'आज़ाद' और सरदार भगतसिंह की भेंट हुई। उन दिनों युवकों ने नये सिरे से दल का संगठन शुरू किया। दिल्ली के पुराने किले के नीचे बैठक हुई। भारतवर्ष के कोने-कोने से क्रांतिकारी वीर आकर इकट्ठे हुए। इस बार का सबसे बड़ा नेता चन्द्रशेखर आज़ाद को चुना गया।

इन दिनों एक पुलिस अफसर तसद्दुक हुसैन क्रांतिकारियों के विरुद्ध प्रमाण इकट्ठे कर रहा था। 'आज़ाद' और उनके साथियों ने सोचा कि इसे ठिकाने लगा दिया जाए! परन्तु बाद में गम्भीरता से सोचा गया कि इससे कुछ बात नहीं बनेगी और व्यर्थ ही में हम में से एक-दो साथी फांसी पर चढ़ा दिए जाएंगे। इसलिए यह विचार छोड़ देना पड़ा।

पुलिस तो हर समय चन्द्रशेखर 'आज़ाद' को पकड़ने के यत्न में लगी रहती थी। परन्तु यह वीर भेस बदलने में इतना चतुर था कि इसे पकड़ना कोई आसान बात न थी। एक मुसलमान पुलिस अफसर को सरकार ने केवल इसी कार्य पर लगाया कि जैसे भी हो 'आज़ाद' को पकड़ो। यह पुलिसवाला छाया की तरह 'आज़ाद' के पीछे घूमने लगा। एक बार उसका 'आज़ाद' से सामना हो ही गया। उसी क्षण 'आज़ाद' ने जेब में हाथ डालकर पिस्तौल निकाल ली। यह देखकर पुलिस अफसर कांप गया। जीवन सभी को प्यारा होता है। वह चुपचाप अपनी जान बचाने के लिए दूसरी ओर चला गया।

एक बार पुलिस दल ने कानपुर में 'आज़ाद' के घर पर छापा मारा। इन दिनों श्री 'आज़ाद' और भगतसिंह देश के प्रसिद्ध नेता एवं दैनिक 'प्रताप' के संचालक श्री गणेशशंकर विद्यार्थी की छत्र-छाया में रहते थे। पुलिस ने जिस समय कमरे में प्रवेश किया, 'आज़ाद' वहां नहीं थे। शुक्ल नामक क्रांतिकारी युवक से पुलिस की टक्कर हो गई। आपस में दनादन गोलियां चलीं। शुक्ल ने अकेले होने पर भी पुलिस को चकरा दिया। अन्त में वह वीर लड़ता-लड़ता पुलिस की गोलियों से स्वर्ग सिधार गया।

लाला लाजपतराय का बदला

जर्मनी के साथ होनेवाले दूसरे महायुद्ध में भारत के लोगों ने अंग्रेज़ों की भरपूर सहायता की। अंग्रेज़ युद्ध में जीत गए। भारतवर्ष को कुछ न कुछ स्वतंत्रता देने का निश्चय हुआ। अंग्रेज़ सरकार ने घोषणा की कि शीघ्र ही एक कमीशन भारत की यात्रा करेगा और तय करेगा कि भारतवासियों को क्या मिलना चाहिए। इस घोषणा में यह भी बताया गया कि इस कमीशन में आधे भारतीय सदस्य लिए जाएंगे।

समय आने पर सरकार अपने वचनों से फिर गई। कमीशन में कुल सात सदस्य लिए गए। ये सातों सदस्य समुद्र-पार के अंग्रेज़ जाति के थे। इनमें एक भी भारतीय को नहीं लिया गया। इस कमीशन के नेता बने मिस्टर साइमन, इसलिए यह कमीशन 'साइमन कमीशन' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

यह कमीशन विलायत से चल पड़ा। हमारे देश के नेताओं ने नगर-नगर में उसके विरोध में सभाएं की और इसका बायकाट करने का निश्चय किया। नगर-नगर में इस कमीशन का

बायकाट हुआ। भारतवर्ष के बड़े-बड़े नगरों से होता हुआ यह कमीशन पंजाब की राजधानी लाहौर की ओर बढ़ा। एक ओर सरकार के पिट्ठू स्वागत के लिए लाहौर स्टेशन की ओर जा रहे थे, दूसरी ओर नगर के असंख्य नवयुवक हाथों में काली झंडियां लिए पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय के पीछे-पीछे 'साइमन कमीशन, लौट जाओ' के नारे से आकाश गुंजाते हुए आगे बढ़ रहे थे।

पुलिस ने उमड़ती हुई प्रजा को आगे बढ़ने से रोक दिया और उसे तितर-बितर होने की आज्ञा दी। जब पुलिस के बार-बार कहने पर भी लोग अपने स्थानों पर डटे रहे, तो नौकरशाही के दूतों ने निहत्थे लोगों पर लाठियां बरसाईं। इससे अनेक युवकों के सिर फट गए और कई बेहोश होकर गिर पड़े। पुलिस अफसर ने क्रोध में भरकर वीर-भूमि पंजाब के हृदय-सम्राट् लाला लाजपतराय के सिर पर इतनी ज़ोर से लाठी मारी कि उनका सिर चकरा गया और वे बड़ी कठिनाई से गिरते-गिरते बचे। इसी चोट के कारण कुछ दिनों में पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय इस संसार से चल बसे।

अपने हृदय-सम्राट् की मृत्यु होते देख क्रान्तिकारी युवकों का हृदय फड़क उठा। उन्होंने अपने नेता का बदला लेने का निश्चय किया। उन्होंने किसी तरह से पता लगा लिया कि लाठी मारनेवाले पुलिस अफसर का नाम सांडर्स या स्काट है।

चन्द्रशेखर आज़ाद, सरदार भगत सिंह, राजगुरु और जयगोपाल पिस्तौल हाथ में लेकर पुलिस अफसर सांडर्स के बंगले की ओर बढ़े। उन्होंने देखा कि वही पुलिस का अफसर मोटर साईकल पर चढ़कर कहीं जाने वाला है। उस पर एक, दो, तीन, चार, गोलियां चलाई गईं। वह वहीं लुढ़ककर ठंडा हो गया। यह देखकर उसका चपरासी क्रोध में भरकर आगे बढ़ा। इन युवकों ने इशारे से उसे रोका और कहा, "रुक जाओ, नहीं तो तुम्हारा भी वही हाल होगा।" परन्तु वह न रुका और युवकों की ओर लपका। एक गोली से उसे भी सदा के लिए सुला दिया गया।

थोड़ी ही देर में सारे नगर में पुलिस का जाल बिछ गया। डी० ए० वी० कालेज पुलिस अफसर सांडर्स के बंगले के बिल्कुल निकट था। इसलिए पुलिसवालों को सन्देह था कि कहीं क्रांतिकारी युवक यहीं छिपे हुए न हों। पुलिस ने कालेज को चारों ओर से घेर लिया और कोना-कोना छान मारा। पुलिस ढूंढ़-ढूंढ़कर हार गई, परन्तु कुछ पता न चला।

लाहौर से निकल भागने के लिए इन युवकों ने बड़ा विचित्र भेस बनाया। सरदार भगत सिंह बने साहब बहादुर। 'आज़ाद' इनकी मेम साहब। राजगुरु बने इनके चपरासी। मुंह में सिगार दबाए, सिर पर फैल्ट हैट पहने सरदार भगत सिंह ऐसे सज रहे थे कि रेलवे पुलिस अफसर ने आगे बढ़कर उन्हें सलाम किया। उनकी मेम की सजावट के क्या कहने! भरे-पूरे सुंदर शरीर-वाले श्री 'आज़ाद' ऊंची एड़ी के सैंडल पहने इस शान से चल रहे थे कि किसी को ज़रा भी शक न हुआ। श्री राजगुरु बगल में फाइल दबाए चपरासी के देश में बन-ठनकर अकड़-अकड़कर चल रहे थे। पहले दर्जे का टिकट लेकर ये लोग गाड़ी में जा बैठे और अमृतसर जा पहुंचे। इस स्टेशन से ये वीर पुलिस की आंखों में धूल झोंक, अलग-अलग गाड़ियों में बैठकर पंजाब की भूमि से दूर निकल गए। पुलिस लाख सिर पटककर रह गई,

परन्तु उन्हें पकड़ न सकी।

एक बार श्री मोतीलाल नेहरू ने चन्द्रशेखर आज़ाद को बुलाया। श्री 'आज़ाद' ने उनको बताया कि किस तरह हम लोग अंग्रेज़ राज्य की जड़ों को खोखला कर रहे हैं।

बम्बई नगर में मज़दूर हड़ताल करना चाहते थे। वे पेट भरने के लिए रोटी और तन ढकने के लिए कपड़े मांग रहे थे। परन्तु अंग्रेज़ शासक उनकी मांगें मानना तो दूर, उलटे उन्हें कानून के डंडे से रोकना चाहते थे।

"घुट-घुट के मर जाऊं, यह मरजी मेरे सयाद की है।" हमारे देश की बागडोर को संभालने वाले गोरी चमड़ी वाले अंग्रेज़ उन भूखे और नंगे भारतीय मज़दूरों की पुकार को पांव तले रौंदने के लिए 'पब्लिक सेफ्टी बिल' पास करवाना चाहते थे। क्रांतिकारी युवकों का हृदय अपने भाइयों के दुखड़े देख रो पड़ा। उनसे न रहा गया। उन्होंने इसका विरोध करने की ठानी। 19 अप्रैल, सन् 1929 के दिन जबकि बिल असेम्बली में पास होना था, सरदार भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त दिल्ली जा पहुंचे। किसी न किसी तरह ये वीर असेम्बली भवन की गैलरी में जा पहुंचे। इन्होंने पहुंचते ही खाली बेंचों पर बम फेंके, साथ ही साथ छोटे-छोटे विज्ञापन भी हाल में फेंके, जिन पर साफ-साफ लिखा था कि हम भारतवासी इस अन्याय से भरे हुए बिल का विरोध करते हैं और बम्बई के मज़दूर भाइयों पर होने वाले अत्याचार को सहन नहीं करेंगे। थोड़ी देर बाद पुलिस ने इन दोनों युवकों के हाथों में हथकड़ियां और पांवों में बेड़ियां डाल दीं।

इसके बाद पुलिस ने पंजाब और उत्तर प्रदेश में स्थान-स्थान पर क्रांतिकारियों के ठिकानों पर छापे मारे और अनेक युवकों को जेल में ठूंस दिया। चन्द्रशेखर आज़ाद अब तक फरार थे और पुलिस के हाथ नहीं आये थे। पुलिस ने कई मुकदमे इन युवकों पर चलाए। अन्त में सरदार भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी हुई। बटुकेश्वरदत्त और कुछ साथियों को काला पानी का दंड मिला। कुछ लोग क्षमा मांगने पर बरी कर दिए गए।

एक के बाद एक करके अपने साथियों को फांसी पर लटकते देख 'आज़ाद' का हृदय कांप उठा। अब वे चारों ओर से अकेले रह गए थे। उन्होंने देखा कि अब क्रांतिकारी ढंग से कार्य करने का समय नहीं रहा। 'अब क्या करना चाहिए'—यह विचार करने के लिए वे श्री जवाहरलाल नेहरू के पास पहुंचे। श्री आज़ाद ने पूछा कि आज जबकि असहयोग आन्दोलन बन्द हो चुका है, गांधी-इरविन समझौते में क्रांतिकारी युवकों की रक्षा के लिए क्या किया गया है? क्या उन्हें अब भी पुलिस के भय से छिपना पड़ेगा? क्या अब भी हम लोग शांतिपूर्वक जीवन नहीं बिता सकेंगे? श्री नेहरू ने बताया कि यह सब कुछ गांधी जी के हाथ में है और वे क्रांतिकारी वीरों के लिए कुछ नहीं कर सकते।

श्री नेहरू इस बातचीत से बड़े प्रभावित हुए परन्तु श्री 'आज़ाद' की कोई सहायता न कर सके। उन्होंने इस बातचीत का वर्णन अपनी पुस्तक 'मेरी कहानी' में बड़े दर्द-भरे शब्दों में किया है।

उधर पुलिस पूरी शक्ति के साथ 'आज़ाद' को खोज रही थी।

कुछ घटनाएं

आगे चलने से पहले 'आज़ाद' के संयमी और साहस-भरे जीवन की कुछ घटनाएं लिखना आवश्यक है।

यह तो आपको पता ही है कि भूखे-नंगे रहकर भी ये देश के लाड़ले सपूत मातृभूमि की गुलामी की बेड़ियों को तोड़ने के लिए सिर पर कफन बांधकर मैदान में उतरते थे। एक समय की बात है कि हर क्रांतिकारी साथी को अपने दल की ओर से चार आने प्रतिदिन व्यय के लिए मिलते थे। यह सन् 1929 के शुरू के दिन थे। 'आज़ाद', विजय कुमार सिंह, सरदार भगतसिंह आदि कानपुर में एक कमरे में रहते थे। उन्हीं दिनों बंगाल से बटुकेश्वर दत्त पधारे। उनके आने की खुशी में एक साथी डबल रोटी ले आए! इसे देख 'आज़ाद' कड़ककर बोले, "भाइयो! हम लोग तो यहां जीवन पर खेलने के लिए इकट्ठे हुए हैं। सामने मृत्यु मुंह खोलकर हमारा स्वागत करने को खड़ी है; ये हैं कि इन्हें खाने-पीने की सूझ रही है। हमें तो सदा एक-एक पैसा सोच-समझकर व्यय करना चाहिए।"

❀

एक बार 'आज़ाद' के साथी ने उन्हें बताया कि एक घर बड़ा धनवान है, वहां बड़ी आसानी से डाका डाला जा सकता है। उस घर में डाका डालने से हमें भरपूर धन मिलने की आशा है। 'आज़ाद' अपने साथियों को एकत्र कर वहीं डाका डालने गए, तो 'आज़ाद' की आंखों ने देखा कि वही साथी उस घर की एक देवी के साथ अनुचित व्यवहार कर रहा है। 'आज़ाद' किसी मूल्य पर चरित्रहीन पुरुष को क्षमा नहीं करते थे। उन्होंने उसी क्षण अपनी पिस्तौल से अपने साथी को ठंडा कर दिया और उस देवी से क्षमा मांगकर खाली हाथ लौट आए।

❀

एक बार 'आज़ाद' को दल के काम के लिए चार हज़ार रुपये की आवश्यकता पड़ी। उनका एक साथी लेन-देन का कार्य करता था। 'आज़ाद' उसके पास पहुंचे और बोले, "भाई! तुम्हारा यह व्यापार कब काम आएगा?" उसके पूछने पर 'आज़ाद' ने उसे बताया कि अभी चार हज़ार रुपया चाहिए। अचानक ज़रूरत आ पड़ी है। किसी भी सूद पर या किसी न किसी ढंग से आज ही रुपया लाओ।

उसके पास उस समय इतना रुपया नहीं था। फिर भी किसी से उधार मांगकर उनका काम चला दिया। 'आज़ाद' ने वचन दिया छः मास बाद रुपया लौटा दूंगा।

अभी चार महीने भी नहीं बीते थे कि जिससे वह धन लिया गया था, उसने अपना रुपया वापस मांग लिया। जब लेन-देन का कार्य करने वाले साथी ने 'आज़ाद' से रुपया मांगा तो वे

बोले, “भाई, जितना सूद चाहो ले लो, परन्तु अभी दो मास रुक जाओ।” उसने समझाकर कहा, “भाई! यह धन सूद पर नहीं लिया गया है। इसे अभी लौटाना है।”

उसी दिन दोपहर में ‘आज़ाद’ और उनके साथियों ने दिल्ली के चांदनी चौक बाज़ार में एक दुकानदार का चौदह हज़ार रुपया लूट लिया और काम चलाया। लेन-देन वाले साथी ने कहा, “रुपया प्राप्त करने का यह ढंग आपको शोभा नहीं देता।”

‘आज़ाद’ ने उसे समझाया, “भाई, क्या करें! जो व्यापारी दूसरों का धन लूट-लूटकर अपनी जेबें भरते हैं, भला ऐसों का धन छीनकर देश के कार्य में न लगाएं तो क्या आकाश से तारे तोड़ लाएं?”

❀

‘आज़ाद’ के माता-पिता बहुत निर्धन थे। उनके पास उन दिनों खाने को भी नहीं रहा था। कुछ लोगों ने किसी न किसी तरह चन्दा करके दो हज़ार रुपये उनकी सहायता के लिए इकट्ठे किए। जब यह रुपया ‘आज़ाद’ के पास पहुंचा, तो उन्होंने उस धन को दल के काम में लगा दिया। वे बोले, “माता-पिता तो सभी के हैं। यदि हम इस तरह करने लगे, तो कार्य चल चुका। देश-सेवा में माता-पिता सभी को, बलिदान करना पड़ता है।”

❀

एक बार ‘आज़ाद’ ढिमरापुर गांव (बुन्देलखंड) में गए। वे उन दिनों ब्रह्मचारी के भेस में थे और अपना नाम ‘हरिशंकर’ रखा हुआ था। उनका उज्ज्वल चरित्र देख गांव के नम्बरदार बड़े प्रसन्न हुए और उन्हें अपने घर में रहने का स्थान दिया। घर की सब बन्दूकें, पिस्तौलें और कारतूस तक उनकी देखरेख में छोड़ दिए। वहां पर उन्होंने अपने साथियों को भी बुला लिया और खूब निशानेबाज़ी का अभ्यास किया। नम्बरदार स्वयं उनके साथ मिलकर शिकार खेलने जाते थे।

❀

एक बार ‘आज़ाद’ अपने साथियों के साथ कहीं जा रहे थे। साथियों की इच्छा हुई कि आज अपने सेनापति का निशाना देखा जाए। उनमें से एक ने बड़े मधुर शब्दों में ‘आज़ाद’ भैया से कहा, “भ्राता! सुनते हैं, आपका निशाना बड़ा अचूक होता है। यदि आप उचित समझें, तो इस एकान्त वन में हमें खेल दिखाइए।” सबकी राय देख ‘आज़ाद’ बोले, “अच्छा देखो, यह सामने पन्द्रह गज़ की दूरी पर जो वृक्ष खड़ा है, उस पर जो नन्हा-सा पत्ता लटक रहा है, उसका मैं निशाना लगा रहा हूं। ध्यान से देखना।”

बन्दूक से गोली छूटी तो सबके मुंह से एक साथ निकल पड़ा, “निशाना नहीं लगा।” फिर दूसरी बार गोली चलाई गई। इस बार भी वार खाली गया। इस तरह एक-एक करके

पांच गोलियां चलाई गईं, परन्तु सभी व्यर्थ, पत्ता हिला तक नहीं। यह देख 'आज़ाद' हैरान होकर बोले, "आज तक मेरा निशाना कभी खाली नहीं गया। न जाने आज क्या बात है!"

अब सब इकट्ठे होकर उस वृक्ष के पास पहुंचे, तो क्या देखते हैं कि वह कोमल पत्ता कई स्थानों से छलनी हो गया है। यह देख सभी साथियों का मुंह नीचा हो गया और उन्होंने अपनी भूल पर क्षमा मांगी।

❀

एक बार 'आज़ाद' रेलगाड़ी में लखनऊ से कानपुर जा रहे थे। पुलिस को पता लग गया। रेलवे पुलिस ने कानपुर स्टेशन का घेरा डाल दिया। श्री 'आज़ाद' रेल के डिब्बे से उतरे और सीधे बाहर निकलने वाले द्वार की ओर बढ़े। एक पुलिस इंस्पेक्टर सामने आया, लेकिन आप ज्योंही अपनी पिस्तौल निकालने लगे, वह भय से कांपने लगा और चुप करके चलता बना। आप छाती तानकर रेलवे स्टेशन से बाहर निकल गए। आपकी ओर देखने का भी किसी को साहस नहीं हुआ।

अन्तिम घड़ियां

प्रयाग में एक धनी सज्जन थे। उनके पास क्रांतिकारी दल का रुपया जमा था। 'आज़ाद' इलाहाबाद पहुंचे और उस सेठ से अपना रुपया मांगा। उसकी नीयत बदल चुकी थी। उसने उस समय तो उन्हें टाल दिया और एक-दो दिन के लिए रोक दिया।

यह 27 फरवरी, सन् 1931 का दिन था। उसी समय पुलिस को सूचना दे दी कि 'आज़ाद' इस समय इलाहाबाद में हैं, और अलफ्रेड पार्क में बैठे हैं।

सुपरिंटेंडेंट ने सारे नगर की पुलिस को उसी क्षण ड्यूटी पर बुला लिया और अलफ्रेड पार्क का घेरा डाल दिया। धीरे-धीरे वह घेरा कड़ाकर दिया गया। इस बीच 'आज़ाद' भी सावधान हो गए। इस समय उनके साथ एक क्रांतिकारी साथी भी था।

अपना सुख-चैन लुटाकर देश के नाम पर अपने सिर को हथेली पर रखकर जीवन से खेलना सीखना हो तो 'आज़ाद' से सीखो। अपने भाइयों के दुःखदर्द मिटाने के लिए ही तो ऐसे वीरों का संसार में जन्म होता है। वे अपने लिए नहीं जीते। वीर चन्द्रशेखर आज़ाद को इस विपत्ति के समय भी अपनी तो चिंता नहीं हुई, परन्तु साथ खड़े क्रांतिकारी युवक के जीवन की रक्षा कैसे हो, इस सोच ने उनके हृदय को तड़पा दिया। इस अद्भुत वीर ने अपने साथी को कहा, "भाई! तुम निश्चिन्त होकर यहां से निकल जाओ और अपने जीवन की रक्षा करो। जब तक तुम खतरे में हो, मुझे चैन नहीं मिलेगा।

साथी की इच्छा नहीं थी कि अपने नेता को मृत्यु के मुंह में ढकेलकर जाए, परन्तु 'आज़ाद' ने उसे धक्के दे-देकर भगा दिया। अपनी पिस्तौल की आड़ में उसे ले लिया और जब तक वह अलफ्रेड पार्क से बाहर नहीं निकल गया, 'आज़ाद' ने दूसरी ओर ध्यान नहीं

दिया। जब 'आज़ाद' को पूरा-पूरा निश्चय हो गया कि उनका साथी बचकर निकल गया है, तब वह वीर सामने खड़ी असंख्य पुलिस से जूझ पड़ा।

एक अंग्रेज़ पुलिस अफसर आगे बढ़कर 'आज़ाद' के सामने आ गया और बोला, "हैंड्स अप।" उसी क्षण 'आज़ाद' ने अपनी पिस्तौल से गोली छोड़ दी, जिससे अंग्रेज़ अफसर नाटवाथर का हाथ ज़ख्मी हो गया। अब वीर 'आज़ाद' पेड़ की आड़ में हो गया और पुलिस दल पर गोलियां चलाने लगा।

दिन के दस बज चुके थे। एक ओर हज़ारों की संख्या में पुलिस खड़ी थी और दूसरी ओर अकेला 'आज़ाद'! बीस मिनट तक दनादन गोलियां चलती रहीं। इस बीच एक और पुलिस अफसर ठाकुर विश्वेश्रनाथ सिंह भी घायल हो गया।

उधर 'आज़ाद' के पिस्तौल की गोलियां समाप्त होने लगीं। इस वीर ने सोचा—मैं चारों ओर छाए हुए इस असंख्य पुलिस दल का कैसे पार पा सकूंगा! और कोई मार्ग न देख उसने अपनी छाती में स्वयं गोली मार ली। उसका शरीर भूमि पर लुढ़क गया।

'आज़ाद' को गिरते देखकर भी पुलिस दल का साहस नहीं हुआ कि आगे बढ़े। इस मुर्दा शरीर के पांव में गोली मारी गई। जब विश्वास हो गया कि वह मर चुका है, तभी पुलिस अफसर आगे बढ़े। पुलिस दल ने उस वीर के शव को घसीटकर लारी में डाल दिया। बहुत थोड़े समय में ही पुलिस ने अपनी जांच पूरी कर ली और उस शरीर को जलाकर राख कर दिया।

पुलिस ने बड़े अभिमान से नगर में घोषणा कर दी कि चन्द्रशेखर आज़ाद पुलिस की गोलियों से मारे गए हैं। अब क्या था, नगरवासी युवक, स्त्री, बालक, वृद्ध अलफ्रेड पार्क की ओर लपके। जिसने भी सुना, काम-धंधा छोड़कर उसी ओर चल दिया। त्रिवेणी के पवित्र तट पर इलाहाबाद की असंख्य जनता ने उस देश के सच्चे सपूत को श्रद्धांजलि भेंट की।

जिस पेड़ की आड़ लेकर वीर चन्द्रशेखर आज़ाद पुलिस से लड़ते रहे, आज़ाद के बलिदान के बाद वह वृक्ष तीर्थ बन गया। नगरवासी देवियां और पुरुष प्रतिदिन पार्क में जाते और उस साहसी वीर की गाथाएं गा-गाकर रो पड़ते। साथ ही साथ चन्दन और सिंदूर से उस वृक्ष की पूजा करते। नित्य ही रंग-बिरंगी पुष्प-मालाओं से और त्रिवेणी के पवित्र जल से बलिदान के चिह्न उस वृक्ष की आरती उतारी जाने लगी। अंग्रेज़ सरकार इस पूजा को भी न सह सकी और उस पेड़ को जड़ से उखड़वा दिया।

'आज़ाद' जनमे ही आज़ाद थे। जब तक जिए, आज़ाद ही रहे और जीवन की अंतिम घड़ियों तक भी आज़ाद ही रहे। शरीर छोड़कर भी वह आज़ाद आत्मा आज़ाद हो गई।

सरल प्रेरणादायक जीवनियां

मेरा बचपन	महाराणा प्रताप	महापुरुषों का बचपन
झांसी की रानी	चाणक्य	वीर पुत्रियां
रवीन्द्रनाथ टैगोर	लोकमान्य तिलक	लालबहादुर शास्त्री
लाला लाजपतराय	श्रीकृष्ण	आदर्श बालक
सरदार पटेल	स्वामी विवेकानन्द	आदर्श देवियां
डॉ. राजेन्द्रप्रसाद	गोस्वामी तुलसीदास	सच्ची देवियां
विनोबा भावे	हमारे राष्ट्रनिर्माता	भारत के महान् ऋषि
जवाहरलाल नेहरू	मीराबाई	गौतम बुद्ध
महात्मा गांधी	गुरु तेगबहादुर	सम्राट् अशोक
चन्द्रशेखर आज़ाद	ईश्वरचन्द्र विद्यासागर	वीर हनुमान
श्यामाप्रसाद मुखर्जी	सरदार भगतसिंह	हमारे स्वामी
गुरु नानकदेव	स्वामी रामतीर्थ	श्री अरविन्द
सुभाषचन्द्र बोस	गुरु गोविन्द सिंह	वीर सावरकर
शिवाजी	सदाचारी बच्चे	साहसी बालक

शिक्षा भारती